पुस्तक परिचय

# युद्ध और शांति

## भगवद्गीता का मनोविज्ञान

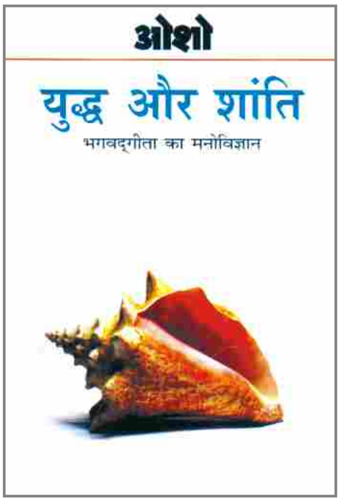


धृतराष्ट्र आंख से अंधे हैं। लेकिन आंख के न होने से वासना नहीं मिट जाती; आंख के न होने से कामना नहीं मिट जाती। काश! सूरदास ने धृतराष्ट्र का खयाल कर लिया होता, तो आंखें फोड़ने की कोई जरूरत न होती। सूरदास ने आंखें फोड़ ली थीं; इसलिए कि न रहेंगी आंखें, न मन में उठेगी कामना! न उठेगी वासना! पर आंखों से कामना नहीं उठती, कामना उठती है मन से। आंखें फूट भी जाएं, फोड़ भी डाली जाएं, तो भी वासना का कोई अंत नहीं है।

गीता की यह अद्भुत कथा एक अंधे आदमी की जिज्ञासा से शुरू होती है। असल में इस जगत् में सारी कथाएं बंद हो जाएं, अगर अंधा आदमी न हो। इस जीवन की सारी कथाएं अंधे आदमी की जिज्ञासा से शुरू होती हैं। अंधा आदमी भी देखना चाहता है उसे, जो उसे दिखाई नहीं पड़ताः बहरा भी सुनना चाहता है उसे, जो उसे सुनाई नहीं पड़ता। सारी इंद्रियां भी खो जाएं, तो भी मन के भीतर छिपी हुई वृत्तियों का कोई विनाश नहीं होता है।

तो पहली बात तो आपसे यह कहना चाहूंगा कि स्मरण रखें, धृतराष्ट्र अंधे हैं, लेकिन युद्ध के मैदान पर क्या हो रहा है, मीलों दूर बैठे उनका मन उसके लिए उत्सुक, जानने को पीड़ित, जानने को आतुर है। दूसरी बात यह भी स्मरण रखें कि अंधे धृतराष्ट्र के सौ पुत्र हैं, लेकिन अंधे व्यक्तित्व की संतति आंख वाली नहीं हो सकती है; भले ऊपर से आंखें दिखाई पड़ती हों। अंधे व्यक्ति से जो जन्म पाता है और शायद अंधे व्यक्तियों से ही लोग जन्म पाते हैं—तो भला ऊपर की आंख हो, भीतर की आंख पानी कठिन है।

यह दूसरी बात भी समझ लेनी जरूरी है। धृतराष्ट्र से जन्मे हुए सौ पुत्र सब तरह से अंधा व्यवहार कर रहे थे। आंखें उनके पास थीं, लेकिन भीतर की आंख नहीं थी। अंधे से अंधापन ही पैदा हो सकता है। फिर भी यह पिता, क्या हुआ, यह जानने को उत्सुक है।

तीसरी बात यह भी ध्यान रख लेनी जरूरी है। धृतराष्ट्र कहते हैं, धर्म के उस कुरुक्षेत्र में युद्ध के लिए इकट्ठे हुए...।

जिस दिन धर्म के क्षेत्र में युद्ध के लिए इकट्ठा होना पड़े, उस दिन धर्मक्षेत्र, धर्मक्षेत्र नहीं रह जाता है। और जिस दिन धर्म के क्षेत्र में भी लड़ना पड़े, उस दिन धर्म के भी बचने की संभावना समाप्त हो जाती है। रहा होगा वह धर्मक्षेत्र, था नहीं! रहा होगा कभी, पर आज तो वहां एक-दूसरे को काटने को आतुर सब लोग इकट्ठे हुए थे।

यह प्रारंभ भी अद्भुत है। यह इसलिए भी अद्भुत है कि अधर्म क्षेत्रों में क्या होता होगा, उसका हिसाब लगाना मुश्किल है। धर्मक्षेत्र में क्या होता है? वह धृतराष्ट्र संजय से पूछते हैं कि वहां युद्ध के लिए आतुर मेरे पुत्र और उनके विरोधियों ने क्या किया है, क्या कर रहे हैं, वह मैं जानना चाहता हूं।

धर्म का क्षेत्र पृथ्वी पर शायद बन नहीं पाया अब तक, क्योंकि धर्मक्षेत्र बनेगा तो युद्ध की संभावना समाप्त हो जानी चाहिए। युद्ध की संभावना बनी ही है और धर्मक्षेत्र भी युद्धरत हो जाता है, तो हम अधर्म को क्या दोष दें, क्या निंदा करें! सच तो यह है कि अधर्म के क्षेत्रों में शायद कम युद्ध हुए हैं, धर्म के क्षेत्रों में ज्यादा युद्ध हुए हैं। और अगर युद्ध और रक्तपात के हिसाब से हम विचार करने चलें, तो धर्मक्षेत्र ज्यादा अधर्मक्षेत्र मालूम पड़ेंगे, बजाय अधर्मक्षेत्रों के।

यह व्यंग्य भी समझ लेने जैसा है कि धर्मक्षेत्र पर अब तक युद्ध होता रहा है। और आज ही होने लगा है, ऐसा भी न समझ लेना; कि आज ही मंदिर और मस्जिद युद्ध के अड्डे बन गए हों। हजारों साल पहले, जब हम कहें कि बहुत भले लोग थे पृथ्वी पर, और कृष्ण जैसा अद्भुत आदमी मौजूद था, तब भी कुरुक्षेत्र के धर्मक्षेत्र पर लोग लड़ने को ही इकट्ठे हुए थे! यह मनुष्य की, गहरे में जो युद्ध की पिपासा है, यह मनुष्य की गहरे में विनाश की जो आकांक्षा है, यह मनुष्य के गहरे में जो पशु छिपा है, वह धर्मक्षेत्र में भी छूट नहीं पाता, वह वहां भी युद्ध के लिए तैयारियां कर लेता है।

इसे स्मरण रख लेना उपयोगी है। और यह भी कि जब धर्म की आड़ मिल जाए लड़ने को, तो लड़ना और भी खतरनाक हो जाता है। क्योंकि तब जस्टिफाइड, न्याययुक्त भी मालूम होने लगता है।

यह अंधे धृतराष्ट्र ने जो जिज्ञासा की है, उससे यह धर्मग्रंथ शुरू होता है। सभी धर्मग्रंथ अंधे आदमी की जिज्ञासा से शुरू होते हैं। जिस दिन दुनिया में अंधे आदमी न होंगे, उस दिन धर्मग्रंथ की कोई जरूरत भी नही रह जाती है। वह अंधा ही जिज्ञासा कर रहा है।

*– (गीता-दर्शन के प्रथम प्रवचन से)*

*यह पुस्तक डायमंड पॉकेट बुक्स द्वारा प्रकाशित हुई है तथा ओशो वर्ल्ड गैलेरिया में उपलब्ध है। गीता के प्रथम दो अध्यायों पर ओशो के प्रवचन इसमें संकलित हैं।*